Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 10/June/2023 IJRAW: 2023; 2(7):73-76 Accepted: 14/July/2023

महात्मा गाँधी और राष्ट्रभाषा: हिन्दी बनाम हिन्दुस्तानी

[*1]डॉ. महेन्द्र सिंह मीणा

[*1]सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, करौली, राजस्थान, भारत।

सारांश

राष्ट्रभाषा का सवाल भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रीयता से जुड़ा हुआ सवाल था। कांग्रेस का नेतृत्व करते हुए महात्मा गांधी ने इसे देश को एकता के सूत्र में बांधने और सद्भाव कायम करने का माध्यम बनाया। भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में औपनिवेशिक दासता के सामुहिक प्रतिरोध की भावना प्रमुख थी, जिसे और ज्यादा घनीभूत करने के लिए भाषा संबंधी विवाद को सुलझाना और एक राष्ट्रभाषा की स्वीकार्यता का होना परम आवश्यक था। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अधिकांश नेता राष्ट्रवाद के पश्चिमी विचारों से प्रभावित थे, इसलिए उन्होंने राष्ट्रभाषा के सवाल को प्रमुखता से उठाया। महात्मा गांधी का नाम उनमें अग्रणी है | उनका मानना था कि-'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।'

मुख्य शब्द: भाषा और राष्ट्रीयता, राष्ट्र भाषा हिंदी, हिंदी-उर्दू बनाम हिन्दुस्तानी

प्रस्तावना

'पश्चिम' में एक समान भू-भाग, भाषा, विश्वास और इतिहास के आधार पर मिलकर रहने वाले समुदायों को एक राष्ट्र के रूप में चिन्हति किया जा रहा था। धर्म, भाषा और क्षेत्र के साथ सांस्कृतिक विविधताओं से परिपूर्ण एवं भौगोलिक रूप से इस विशाल भारतीय उपमहाद्वीप को अखण्डता के सूत्र में पिरोने के लिए जिस भाषा की भूमिका को सबसे ज्यादा समझा गया, वह हिन्दी थी। स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने वाले ज्यादातर नेता मानते थे कि भारत की कोई प्रतिनिधि भाषा हो सकती है तो वह हिन्दी है, जिसे जनता का अधिकांश भाग जानता और समझता है। हिन्दी भाषा का प्रयोग उन्होंने एक तरह से मानसिक गुलामी के चोले को उतार फेंकने के प्रतीक के बतौर किया। ब्रह्म समाज के बांग्ला भाषा-भाषी नेता केशवचंद्र सेन से लेकर गुजराती बोलने वाले स्वामी दयानंद सरस्वती ने जनमानस में लोकभाषा हिन्दी को तवज्जो दी। गुजराती को मातृभाषा मानने वाले महात्मा गांधी मराठी भाषा-भाषी काका कालेलकर को हिन्दी के प्रचार-प्रसार का जिम्मा सौंपते हैं। बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय और ईश्वरचंद्र विद्यासागर जहां हिन्दी का समर्थन करते हैं, वहीं नेताजी सुभाषचंद्र बोस 'आजाद हिन्द फौज' में हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं।

महात्मा गाँधी के राष्ट्र भाषा सम्बन्धी विचार

महात्मा गांधी के दिमाग में राष्ट्रभाषा की संकल्पना पूर्णरूप से स्पष्ट थी, इसलिए भडौच, गुजरात में आयोजित 'गुजरात शिक्षा सम्मेलन' के अध्यक्षीय भाषण में राष्ट्रभाषा पर विचार करते हुए गांधीजी कहते हैं "अंग्रेजी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती और न उसका प्रयत्न किया जाना चाहिए।" [1] तब राष्ट्रभाषा के क्या लक्षण होने चाहिए? इस पर विचार करते हुए वे पांच लक्षण चिन्हित करते हैं-

1. वह भाषा सरकारी नौकरों के लिए आसान होनी चाहिए।
2. उस भाषा के द्वारा भारत का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक कामकाज शक्य होना चाहिए।
3. उस भाषा को भारत के ज्यादातर लाग बोलते हों।
4. वह भाषा राष्ट्र के लिए आसान होनी चाहिए।
5. उस भाषा का विचार करते समय क्षणिक या अस्थायी स्थिति पर जोर न दिया जाये।" [2]

वे अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि "....अंग्रेजी भाषा में इनमें से एक भी लक्षण नहीं है। ....अंग्रेजी को राष्ट्रभाषा बनाना कृत्रिम विश्वभाषा (एस्पेरेंटो) दाखिल करने जैसी बात है। ...तब कौनसी भाषा उन पाँच लक्षणों से युक्त है? यह माने बिना काम चल ही नहीं सकता कि हिन्दी भाषा में ये सारे लक्षण मौजूद है।" [3] यहाँ यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि गांधीजी के यहाँ हिन्दी का मतलब 'हिन्दुस्तानी' है। गाँधीजी हिन्दी भाषा के स्वरूप को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि "हिन्दी भाषा मैं उसे कहता हूँ, जिसे उत्तर में हिन्दू और मुसलमान बोलते हैं और देवनागरी या फारसी (उर्दू की) लिपि में लिखते हैं।" [4] गांधीजी हिन्दी और उर्दू को अलग भाषा के रूप में चिहिन्त नहीं करते हैं।

महात्मा गांधी अनुसार राष्ट्रभाषा को राष्ट्रीय गौरव का उन्नायक, सांस्कृतिक समन्वय का पोषण करने वाली और देश की एकता और अखंडता का परिचायक होना चाहिए। वे उस राष्ट्रभाषा को 'हिन्दुस्तानी' कहते हैं, जो कि हिन्दी और उर्दू का मिला जुला रूप है- "हिन्दी और उर्दू दो अलग भाषाएँ है, यह दलील सही नहीं है। उत्तर

***Corresponding Author:** डॉ. महेन्द्र सिंह मीणा

भारत में मुसलमान और हिन्दू दोनों एक ही भाषा बोलते हैं। भेद पढ़े-लिखे लोगों ने डाला है। इसका अर्थ यह है कि हिन्दू शिक्षित वर्ग ने हिन्दी को केवल संस्कृतमय बना दिया है। इस कारण कितने ही मुसलमान उसे समझ नहीं सकते। लखनऊ के मुसलमान भाइयों ने उस उर्दू में फारसी भर दी है और उसे हिन्दुओं के समझने के अयोग्य बना दिया है। ...मैं उत्तर में रहा हूँ, हिन्दू-मुसलमानों के साथ खूब मिला-जुला हूँ और मेरा हिन्दी भाषा का ज्ञान बहुत कम होने पर भी मुझे उन लोगों के साथ व्यवहार रखने में जरा भी कठिनाई नहीं हुई है। जिस भाषा को उत्तरी भारत में आम लोग बोलते हैं, उसे चाहे उर्दू कहें चाहे हिन्दी, दोनों एक ही भाषा की सूचक है। यदि उसे फारसी लिपि में लिखिये तो वह उर्दू भाषा के नाम से पहचानी जायेगी और नागरी लिपि में लिखें तो वह हिन्दी कहलायेगी।" [5] लिपि के झगड़े का व्यावहारिक हल सुझाते हुए गांधीजी कहते हैं कि-"अंत में जब हिन्दू-मुसलमानों में एक दूसरे के प्रति तनिक भी संदेह की भावना नहीं रह जायेगी और अविश्वास के सारे कारण दूर हो जायेंगे, तब जिस लिपि का ज्यादा जोर रहेगा, वह लिपि ज्यादा लिखी जायेगी और वही राष्ट्रीय लिपि हो जायेगी।" [6]

हिन्दुस्तानी की पूर्व पीठिका

महात्मा गांधी जिस 'हिन्दुस्तानी' भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में आरूढ़ देखना चाहते थे, वह उनकी मौलिक खोज हो, ऐसा नहीं कहा जा सकता। गांधीजी से काफी पहले उसका पहला व्याकरण 1698 ई. में डच भाषा-भाषी जॉन जोशुआ केटलर द्वारा 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' शीर्षक से लिखा जा चुका था। तदोपरांत बैंजामिन शुल्जे ने 1745 ई. में लैटिन भाषा में 'ग्रामेटिका हिंदोस्तानिका' ग्रंथ लिखा। 1773 ई. में जॉन फार्गुसन की 'ए डिक्शनरी ऑफ द हिन्दुस्तानी लैग्वेज' और जॉन गिलक्राइस्ट का 1790 में 'ए डिक्शनरी आफ द हिन्दुस्तानी लैंग्वेज' नामक व्याकरण का ग्रंथ प्रकाशित हुआ। गार्सा द तासी द्वारा लिखित हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास-'इस्तवार द ला लितरेत्युर ऐंदुई ऐंदुस्तानी' हिन्दुस्तानी का ही इतिहास है। 1800 ई में स्थापित कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज के हिन्दुस्तानी विभाग के प्राध्यापक जॉन गिलक्राइस्ट हिन्दुस्तानी की तीन शैली - फारसी/दरबारी शैली, हिन्दुस्तानी और हिंदवी शैली मानते थे। वे 'हिन्दुस्तानी' को 'द ग्रेंड पॉपुलर स्पीच ऑफ हिन्दुस्तान' के रूप में व्याख्यायित करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दुस्तानी स्वतंत्रता आंदोलन से पूर्व ही भारतीय जनमानस का प्रतिनिधित्व करती थी। गांधीजी इस बात से भलिभांति परिचित रहे होंगे कि देश की एकता और अखण्डता को कायम रखने में हिन्दुस्तानी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

महात्मा गांधी के दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने के पूर्व ही पं. मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरूषोत्तमदास टंडन द्वारा 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की नींव रखी जा चुकी थी। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में प्रवृत इस संस्था से गांधी जी लगभग 27 साल जुड़े रहे, लेकिन हिन्दी के स्वरूप और लिपि के सवाल पर उनका पुरूषोत्तमदास टंडन और सम्मेलन की नीतियों से अलगाव था। जिसके चलते उन्होंने इससे इस्तीफा भी दे दिया था। गांधीजी 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्रभाषा बनाने के साथ देवनागरी और फारसी दोनों को इसकी लिपि के रूप में स्वीकार करने के पक्षधर थे। 25 जुलाई 1945 को हिन्दी साहित्य सम्मेलन से त्यागपत्र देते हुए गांधीजी पुरूषोत्तमदास टंडन को लिखते हैं-"मेरा खयाल है कि सम्मेलन ने मेरी हिन्दी की व्याख्या अपनायी नहीं है। ...राष्ट्रभाषा की मेरी व्याख्या में हिन्दी और उर्दू लिपि और दोनों शैली का ज्ञान आता है। ऐसा होने से ही दोनों का समन्वय होने का है तो हो जायेगा। मुझे डर है कि मेरी यह बात सम्मेलन को चुभेगी। इसलिए मेरा इस्तीफा कबूल किया जाय। हिन्दुस्तानी प्रचार का कठिन काम करते हुए मैं हिन्दी की सेवा करूंगा और उर्दू की भी।" [7] काका कालेलकर ने गांधीजी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के विवाद का राजनीतिक विश्लेषण करते हुए लिखा कि-"हिन्दी का प्रचार करते हम इतना देख सके कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन को उर्दू से लड़कर हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना है और गांधीजी को तो उर्दू से जरूरी समझौता करके हिन्दू-मुस्लिमों की सम्मिलित शक्ति द्वारा अंग्रेजी को हटाकर उस स्थान परहिन्दी को बिठाना था। इन दो दृष्टियों के बीच जो खींचातानी चली, वही है गांधी युग के राष्ट्रभाषा के इतिहास का सार।" [8] तात्कालिक राजनीतिक परिस्थितियों में जहां हिन्दी और उर्दू का मतभेद हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता को मजबूत कर रहा था, वहीं गांधीजी हिन्दुस्तानी भाषा के माध्यम से हिन्दू-मुस्लिम एकता को कायम रखने के लिए प्रयासरत थे।

14 अप्रेल 1946 को 'हरिजन बंधु' पत्र में हिन्दुस्तानी के संदर्भ में हिन्दू-मुस्लिम एकता की विचारधारा को पुष्ट करते हुए गांधीजी लिखते हैं-"हिन्दुस्तानी का प्रचार हिन्दी-प्रचार का विरोधी नहीं, बल्कि उसका पूरक है। नागरी लिपि में लिखी जाने वाली संस्कृत प्रचुर हिन्दी राष्ट्रभाषा नहीं है। और न ही उर्दू लिपि में लिखी जाने वाली फारसी युक्त भाषा राष्ट्रभाषा है। मैं सिर्फ यही कहूँगा कि हिन्दी सीखने वाले को उर्दू सीखनी चाहिए और उर्दू सीखने वाले को हिन्दी। तभी हम सच्ची राष्ट्रभाषा का सर्जन कर सकेंगे।" [9] अपने एक लेख में गांधीजी लिखते हैं कि 'लाखों भारतीय जो गांवों में रहते हैं, उन्हें किताबों से कोई लेना-देना नहीं है। वे हिन्दुस्तानी बोलते है, जिसे मुस्लिम उर्दू लिपि में लिखते हैं और हिंदू उर्दू या नागरी लिपि में लिखते हैं, इसलिए हमारा और आपका यह कर्तव्य है कि हम दोनों लिपियां सीखे।' 16 जून 1946 को 'हरिजन सेवक' में हिन्दुस्तानी के स्वरूप को अधिक स्पष्ट करते हुए महात्मा गांधी लिखते हैं-"उर्दू वाले मानते हैं कि हिन्दुस्तानी और उर्दू एक ही हैं, हिन्दी वाले मानते हैं कि लिपि उर्दू होने पर भी हिन्दुस्तानी हिन्दी है।...न हिन्दी हिन्दुस्तानी है, न उर्दू हिदुस्तानी। हिन्दुस्तानी बीच की बोली है। यह सही है कि आज उसका चलन नहीं है। अगर ईश्वर मुझे जिन्दा रखेगा तो इसी अखवार को पढ़ने वाले देखेंगे कि हिन्दुस्तानी बोली वैसी ही मीठी होगी जैसी हिन्दी या उर्दू है। दोनों का सहारा लेकर हिन्दुस्तानी ऐसी बोली बनेगी जो करोड़ों को पूरा काम देगी और कम से कम भाषा का झगड़ा मिट जायेगा।" [10]

महात्मा गांधी हिन्दी (हिन्दुस्तानी) भाषा को राष्ट्र की 'एकता और अखंडता' को मजबूत करने का प्रमुख माध्यम मानते है। भारतीयों को वैचारिक और मानसिक गुलामी के बंधनों से मुक्त करवाने के लिए गांधीजी ने 1918 ई. में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए अहिन्दी प्रदेशों में हिन्दी के विस्तार की वृहद योजना बनाई। गांधीजी ने अपने बेटे 'देवदास' को 1918 में ही शिक्षकों के एक दल के साथ दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के हेतु भेज दिया। जब वहां उन्हें आशानुरूप सफलता नहीं मिलती, तब भी गांधीजी खुद उन हिन्दी प्रचारकों का हौंसला बढ़ाते हैं-'जब तक तमिल प्रदेश के प्रतिनिधि सचमुच हिन्दी के बारे में सख़्त नहीं बनेंगे, तब तक महासभा में से अंग्रेजी का बहिष्कार नहीं होगा। मैं देखता हूं कि हिन्दी के बारे में करीब-करीब खादी के जैसा हो रहा है। वहां जितना संभव हो, आंदोलन किया करो। आखिर में तो हम लोगों की तपस्या और भगवान की जैसी मरजी होगी वैसा ही होगा।' गांधीजी ने 1920 ई. में अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की। सम्पूर्ण भारत में स्नातक स्तर पर हिन्दी में अनिवार्य विषय का प्रारंभ करने की शूरूआत पहली बार इसी विश्वविद्यालय से हुई।

पुरूषोत्तमदास टंडन को लिखे एक पत्र में गांधीजी ने लिखा-'मेरे लिए तो हिन्दी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।' महात्मा गांधी अंग्रेजी से मुकाबले में हिन्दी को खड़ा करने की चाहत रखते हैं, वे उसे के जन-मन की भाषा बनाना चाहते हैं, इसलिए अपने दक्षिण अफ्रीका के प्रवास के दौरान ही यह बात स्पष्ट कर देते हैं कि 'स्वराज्य करोड़ों भूखे मरने वालों का, करोड़ों निरक्षरों, दलितों और अंत्यजों का हो, तो उनके लिए हिन्दी ही एकमात्र सहारा बन सकती है।' गांधीजी इस बात को समझते थे कि अंग्रेजी को आजाद भारत में स्वीकार करना,

एक तरह से मानसिक गुलामी में जकड़े रहना है। गांधीजी हिन्दी को राष्ट्र की सम्पर्क भाषा के साथ राजभाषा का गौरव दिलाने के लिए प्रतिबद्ध थे। हिन्दी के प्रति गांधीजी का अनुराग और संकल्प उन्हें पराकाष्ठा की किसी भी सीमा का अतिक्रम करता है। 01 सितम्बर 1921 को 'यंग इंडिया' में गांधीजी 'राष्ट्रीय शिक्षा' पर विचार रखते हुए लिखते हैं कि "वर्तमान शिक्षा प्रणाली का यह सबसे बड़ा दुखान्त दृश्य है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम ने हमारी देशी भाषाओं के विकास का रोक दिया है। यदि मेरे हाथ में मनमानी करने की सत्ता होती तो मैं आज से ही विदेशी भाषा के द्वारा अपने देश के लड़के-लड़कियों की पढ़ाई बंद करवा देता और सारे शिक्षकों और अध्यापकों से यह माध्यम तुरंत बदलवाता या उन्हें बर्खास्त करा देता।" [11] महात्मा गांधी 'हिन्दुस्तानी' को बोलचाल की भाषा ही नहीं, देश की आधिकारिक राजभाषा के बतौर देखना चाहते थे, जहां न्यायालय भी सुनवाई के लिए उसका प्रयोग करें। गांधीजी का मानना था कि 'कोर्ट में सुनवाई के दौरान राष्ट्रीय भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता है तो लोगों को न्यायिक प्रक्रिया पूरी तरह समझ नहीं आयेगी।'

महात्मा गांधी 'यंग इंडिया' में लिखते हैं-'हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करने में एक दिन भी खोना देश को भारी सांस्कृतिक नुकसान पहुंचाना है। जिस तरह हमारी आजादी को जबरदस्ती छीनने वाले अंग्रेजों की सियासी हुकूमत को हमने सफलतापूर्वक इस देश से निकाल दिया, उसी तरह हमारी संस्कृति को दबाने वाली अंग्रेजी भाषा को भी यहां से निकाल बाहर करना चाहिए।' दिसंबर 1916 को गांधीजी के सभापतित्व में आर्य समाज मंडल द्वारा 'एक भाषा-एक लिपि' विषयक सम्मेलन हुआ, जिसमें यह संकल्प पारित किया गया कि 'हिन्दी भाषा और देवनागरी का प्रचार-प्रसार देश के हित एवं एकता की स्थापना के लिए किया जाना चाहिए।' 1925 ई. में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में गांधीजी की प्रेरणा से यह प्रस्ताव पास होता है कि-'कांग्रेस का, कांग्रेस की महासमिति का और कार्यकारिणी समिति का कामकाज आमतौर पर हिन्दी में चलाया जायेगा।' गाँधीजी हिन्दी को भावनात्मक नजरिये से ज्यादा राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में महत्वपूर्ण मानते थे। नवम्बर 1921 को यंग इंडिया' में गांधीजी लिखते हैं 'हिन्दी के भावनात्मक अथवा राष्ट्रीय महत्व की बात छोड़ दे, तो भी यह दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक आवश्यक मालूम होता जा रहा है कि तमाम राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं को हिन्दी सीख लेना चाहिए और राष्ट्र की तमाम कार्यवाही हिन्दी में ही की जानी चाहिए।' 1927 गांधीजी लिखते हैं कि 'वास्तव में ये अंग्रेजी में बोलने वाले नेता है जो आम जनता में हमारा काम जल्दी आगे नहीं बढ़ने देते। वे हिन्दी सीखने से इंकार करते है, जबकि हिन्दी द्रविड़ प्रदेश में भी तीन महीने के अंदर सीखी जा सकती है।'

`एक तरह से गांधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रीय एकता, अखंडता और स्वाभिमान का पर्याय बना दिया था। वे 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना करने के साथ वर्धा में भी राष्ट्रभाषा प्रचार समिति को मूर्त रूप देते हैं। उनकी प्रेरणा से हिन्दीतर प्रदेशों में भी हिन्दी व्यापक स्तर पर सीखी जाने लगी। महात्मा गांधी के हिन्दी प्रेम की बानगी का एक उदाहरण उस समय का है, जब देश औपनिवेशिक दासता से मुक्त होकर आजादी का जश्न मना रहा था। गांधीजी से एक विदेशी पत्रकार ने अंग्रेजी में उद्बोधन का आग्रह किया तो गांधीजी ने विनम्रतापूर्वक मना कर दिया। तब उस पत्रकार ने कहा कि 'उनका उदबोधन पूरी दुनिया के लिए होगा, इसलिए उन्हें अंग्रेजी में उदबोधन देना चाहिए।' इस पर गांधी ने दो टूक उत्तर देते हुए कहा-'दुनिया से कह दो कि गांधी अंग्रेजी नहीं जानता।'

महात्मा गांधी द्वारा हिन्दी भाषा को अधिक तबज्जो दिए जाने और राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार किये जाने पर लोगों ने प्रान्तीय भाषाओं का सवाल खड़ा किया तो गांधीजी ने सभी भारतीय भाषाओं का समादर और सम्मान प्रकट करते हुए कहा कि-'महान प्रान्तीय भाषाओं को उनके स्थान से च्युत करने की कोई बात नहीं है, क्योंकि राष्ट्रीय भाषा की इमारत प्रान्तीय भाषाओं की नींव पर खड़ी की जानी है। दोनों का लक्ष्य एक-दूसरे की जगह लेना नहीं, बल्कि एक-दूसरे की कमी को पूरा करना है।' गाँधीजी प्रान्तीय और मातृभाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाये जाने की वकालत करते हैं। गांधीजी का मानना था कि मातृभाषा में ही कोई व्यक्ति अपने को सही तरह से अभिव्यक्त कर सकता है। एक अवसर पर उन्होंने कहा कि-'भारत के युवक और युवतियां अंग्रेजी और दुनिया की दूसरी भाषाएं खूब पढ़े, मगर मैं हरगिज यह नहीं चाहूंगा कि कोई भी हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषा को भूल जाय या उसकी उपेक्षा करें या उसे देखकर शरमाये अथवा यह महसूस करे कि मातृभाषा के जरिए वह ऊंचे से ऊंचा चिन्तन नहीं कर सकता।'

15 अक्टूवर 1917 को भागलपुर, विहार में छात्र सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण में गांधी जी मातृभाषा के संबंध में कहते हैं कि- "मातृभाषा का अनादर मां के अनादर के बराबर है। जो मातृभाषा का अपमान करता है, वह स्वदेशभक्त कहलाने लायक नहीं।... बहुत से लोग ऐसा कहते सुने जाते है कि 'हमारी भाषा में ऐसे शब्द नहीं, जिनमें हमारे ऊंचे विचार प्रकट किये जा सके, किन्तु यह कोई भाषा का दोष नहीं। भाषा को बनाना और बढ़ाना, हमारा अपना ही कर्तव्य है।....यदि हम मातृभाषा की उन्नति नहीं कर सके और हमारा यह सिद्धान्त रहे कि अंग्रेजी के जरिये ही हम अपने ऊँचे विचार प्रकट कर सकते हैं और उनका विकास कर सकते हैं तो इसमें जरा भी शक नहीं कि हम सदा के लिए गुलाम बने रहेंगे।" [12]

'हिन्दुस्तानी' को गांधीजी अपनी मातृभाषा स्वीकार करते थे। वे अंग्रेजी के विरोधी नहीं थे किन्तु भाषा के अधकचरे ज्ञान के खिलाफ जरूर थे। जिसे वे उस भाषा और उसके कथ्य के लिए खतरा मानते थे। 05फरवरी 1916 ई. को काशी नागरी प्रचारिणी सभा को संबोधित करते हुए गांधीजी अंग्रेजी के जानकार लोगों से आग्रह करते हैं कि 'वे अंग्रेजी के उच्च विचार और नये खयाल लोगों के सामने रखें', इसी के साथ वे हिन्दी के साथ अन्य भाषाएं भी सीखने पर जोर देते है। गांधी जी का मानना था कि भारत के हर प्रान्त में शिक्षा का माध्यम उस प्रदेश की भाषा यानि मातृभाषा होना चाहिए। वे कहते हैं कि "राष्ट्र के विद्यार्थी अपनी मातृभाषा में नहीं, अन्य भाषा में शिक्षा पाते हैं तो वे आत्महत्या करते है। विदेशी भाषा से बच्चों पर बेजा जोर पड़ता है और उनकी सारी मौलिकता नष्ट हो जाती है। इसलिए किसी विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना मैं राष्ट्र का सबसे बड़ा दुर्भाग्य मानता हूं।" प्रारंभ में पं.जवाहरलाल नेहरू के राष्ट्रभाषा संबंधी विचार भी गांधीजी से मेल खाते थे। नेहरूजी का मानना था कि-"हर प्रान्त की सरकारी भाषा राज्य के कामकाज के लिए उस प्रान्त की भाषा होनी चाहिए। परन्तु हर जगह, अखिल भारतीय भाषा होने के नाते हिन्दुस्तानी को सरकारी तौर पर माना जाना चाहिए। अखिल भारतीय भाषा कोई हो सकती है तो वह सिर्फ हिन्दी या हिन्दुस्तानी कुछ भी कह लीजिए, वही हो सकती है।" 1928 की नेहरू रिपोर्ट में भाषा संबंधी सिफारिश इस तरह है- "देवनागरी अथवा फारसी में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी भारत की राष्ट्रभाषा होगी, परन्तु कुछ समय के लिए अंग्रेजी का उपयोग जारी रहेगा।" अंग्रेजी का यह प्रयोग आज भी न केवल जारी है, अपितु वर्तमान भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय जनमानस के बीच अभिजात्य वर्ग की प्रतिनिधि बन गई है।

निष्कर्ष

आजादी के 75 साल पूर्ण होने पर भी हम हिन्दी को एक राष्ट्रभाषा नहीं बना पाये। इसका एक संभावित कारण यह भी था कि 'हिन्दुस्तानी' जिस तरह व्यापक राष्ट्रीयता और सामाजिक समरसता का बोध कराती थी, वह हिन्दी से संभव नहीं हुआ। यह शब्द अपने आप में क्षेत्रीयता की सीमाओं को लांघकर पूरे देश की गंध का अहसास कराता था, इसमें जाति और धर्म की संकीर्णता का कोई आभास नहीं मिलता था। हिन्दी और उर्दू के झगड़े को रोकने के

साथ हिन्दू और मुसलमानों के बीच अविश्वास की खांई को पाटने में सक्षम थी। आज जब संविधान में राजभाषा के बतौर 'हिन्दी' को स्वीकार कर लिया है, तब हिन्दी और हिन्दुस्तानी के विवाद पर पूर्णविराम लग गया है। किन्तु यदि हिन्दी को सही मायने में राष्ट्रभाषा बनाना है तो 'हिन्दी' में 'हिन्दुस्तानी' का अर्थ भरना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सम्पूर्ण गांधी वांड्.मय, (भाग-14, अक्टूबर 1917 से जुलाई 1918): प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अगस्त 1965, पृ. सं.-28
2. पूर्वोक्त: पृ. सं. 28
3. पूर्वोक्त: पृ. सं. 29
4. पूर्वोक्त: पृ. सं. 29
5. पूर्वोक्त: पृ. सं. 29
6. पूर्वोक्त: पृ. सं. 29
7. सम्पूर्ण गांधी वांड्.मय, (भाग-81, 17जुलाई 1945 से 31अक्टूबर 1945): प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अक्टूबर 1990, पृ. सं.-35
8. राष्ट्रभाषा और महात्मा गाँधी: अमरनाथ https://www.jansatta.com/politics/jansatta-column-politics-opinion-artical-about-national-language-and-mahatma-gandhi-hindi-diwas/764334/
9. सम्पूर्ण गांधी वांड्.मय, (भाग-84, 14 अप्रेल 1946 से 15 जुलाई 1946): प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अप्रेल 1997, पृ. सं.-03
10. गाँधी का साहित्य और भाषा चिन्तन: श्री भगवान सिंह, सर्व सेवा संघ प्र. राजघाट, बनारस, पृ.सं. 147
11. सम्पूर्ण गांधी वांड्.मय, (भाग-21, अगस्त 1921से दिसम्बर 1921): प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, मार्च 1967, पृ. सं.-39
12. सम्पूर्ण गांधी वांड्.मय, भाग-14 (अक्टूबर 1917 से जुलाई 1918): प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, अगस्त 1965, पृ. 06